INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL
ISSN NO : 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 11 | ISSUE - 10 | NOVEMBER - 2021

''प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति एवं गुप्तकालीन शिक्षा का समीक्षात्मक अध्ययन''

डॉ. श्रीकृष्ण सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर–इतिहास, पी.के.के. राजकीय महाविद्यालय, जलालाबाद, शाहजहाँपुर

प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रद्धति अपने आप में अद्वितीय थी, शिक्षा को प्रकाश और शक्ति का स्त्रोत समझा गया हैं, इसके मध्यम से मनुष्य जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उचित मार्ग को अनुसरण कर अपने जीवन तथा समाज के लिए भी बहुउययोगी होकर नवीनता की ओर अग्रसर होता है। शिक्षा ही एक ऐसी स्त्रोत है जिसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति अपनी शारीरिक, मानसिक वौद्धिक और अध्यात्मिक शक्तियों का विकास कर संसार में जीवन के वास्तविक सुख को प्राप्त कर सकता है।[1] शिक्षा का मुख्य लक्ष्य संसारिक सुखों से विरक्त होकर वास्तविक जीवन के पथ पर चलना, जिससे मनुष्य अपने ज्ञान के प्रकाश से अन्य लागों के जीवन को भी प्रकाशित कर सके। 'सा विद्या या विमुक्ते' जैसी शिक्षा पद्धति हमारे प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति में दिखाई पड़ती है। मनुष्य अन्य व्यक्तियों को शिक्षा देकर पूर्वजों से उऋण होने जैसी घारणा से भी अपने जीवन को धन्य कर सकता था। आश्रम जीवन पद्धति जो शिक्षा प्रणाली की मूल थी, जिसमें ब्रहतमचर्य आश्रम चरित्र निर्माण और ज्ञान की प्राप्ति जीवन की मूल मंत्रणा हुआ करती थी, स्वयं व्यक्ति आध्यात्मिक उन्नति करके अपने जीवन के लक्ष्य, मोक्ष की ओर अग्रसर होता था। शिक्षा का आरंम्भ गायत्री मंत्र से होता था। वह हमेशा इस मंत्र के माध्यम से ईश्वर के प्रति कृतज्ञ रहता था कि ईश्वर उसे संमार्ग पर चलाए, ब्रहमचर्य आश्रम में वह सदैव तपस्वी जैसा जीवन व्यतीत करके समाज के लिए बहुययोगी रूप में कार्य करता और दुखी जनों की सेवा परमोधर्म में संलग्न रहता। शैक्षणिक संस्कार ब्रह्मचर्य आश्रम प्रमुख रहा होगा ऋग्वेद में उपनयन संस्कार का उल्लेख नहीं है। उपनयन का अभिप्राय गुरू के निकट जाने से है। शिष्य गुरू का संबंध परिवार की तरह था, वैदिक ग्रंथ का अध्ययन करने वाले वियार्थी के लिए ऋग्वेद में ब्रह्मचारी शब्द प्रयुक्त हुआ है।[2] प्रारंम्भ में पिता ही अपनी संतान को शिक्षा देने का कार्य करता था, वाद में वैदिक ग्रेथों के गुरू भी शिक्षा देने लगे। अनेक वैदिक स्त्रियों के विद्वान होने का प्रमाण वैदिक ग्रेथों में उल्लिखित है। जैसे वैदिक सुक्त विश्ववारा, सिकता, निवावरी घोषा, लोपामुद्रा और अपाला आदि विदुषी स्त्रियों की रचनाएं उनके ज्ञान के बारे में अवगत कराती है। अनेक स्त्रियां यज्ञों में मंत्रों का उच्चारण करती थीं।

प्राचीन शिक्षा प्रणाली के संदर्भ में ऋग्वेद के एक सुक्त से स्पष्ट होता है कि विद्यार्थी पिता अथवा गुरूजनों से मौखिक शिक्षा प्राप्त करते थे, एवं अपने पाठ को बार–बार दुहराकर कंठस्थ करते थे।[3] एक अन्य सुक्त से ज्ञात होता है कि बाद–विवाद का शिक्षा पद्धति में महत्वपूर्ण स्थान था।[4] प्राचीन वैदिक कालीन शिक्षा पद्धति में लेखन कला का अत्येत अभाव था, किन्तु ज्ञान को कंठस्थ करने की प्रथा पर अत्यधिक जोर दिया जाता था। वैदिक कालीन सहित्य के अंतिम भाग उत्तर वैदिक कालीन साहित्य में ज्ञान को दो भागों में देखा जाने लगा। ब्राह्मण ग्रंथों के अनुसार विधिपूर्वक यज्ञ करने से मनुष्य को मोक्ष प्राप्त हो सकता है, जबकि

उपनिषद के अनुसार यज्ञ करना व्यर्थ तथा मोक्ष प्राप्ति के लिए सत्य ज्ञान जरूरी बताया गया है। इस काल में शिक्षा का मुख्य उद्देश्य ब्रह्म अथवा आत्मा को जानने से है, उपनिषदों में ज्ञान को अध्यात्म विद्या कहा गया है। इस विद्या से व्यक्ति इहलोक में ही नहीं बल्कि परलोक में भी सुख की प्राप्ति कर सकता है। गुरू शिष्य को अनुशासन में रहने को कहता है, तथा उसे उपनिषद सम्बन्धी शिक्षा के उद्देश्य सम्बन्धी ज्ञान कराता है।[5] गुरू कहता है; हे शिष्य तू सत्य बोल, धर्म का आचरण कर, स्वध्याय और प्रवचन में प्रमाद मत कर माता, पिता, आचार्य और अतिथियों की सेवा में प्रमाद कर मेरा जो अच्छा आचरण है उसी को तू अनुकरण कर। जिस प्रकार वेदवेत्ता, विचारशील धर्मात्मा, ब्रह्मण आचरण करते हो। जब विद्यार्थी वैदिक ग्रंथों का अध्ययन करता था विद्वान कुछ मंत्रों का उच्चरण करते और प्रार्थना की जाती थी कि ईश्वर उसे मेधावी बनावे तथा विद्या प्राप्ति में सफलता प्रदान करें।[6] विद्यार्थी के जीवन में स्मृति मेघा के साथ–साथ उसके शारीरिक विकास पर भी ध्यान देने का उल्लेख मिलता है।[7] आचार्य स्वंय अन्य विद्यार्थियों में नवीन विद्यार्थी की श्रेण्ठता के लिए प्रार्थना करता था, वह कामना करता कि उसे भी प्रखर बुद्धि और धन संपत्ति भविष्य में प्राप्त हो, जितनी की अन्य शिष्यों को हुई है।[8]

जब विद्यार्थी गुरूकुल में प्रवेश लेता गुरू उसे दण्ड[9] और मेखला[10] देता था। इस समय विद्यार्थी किशोर होते थे, कुछ विद्यार्थी आजीवन शिक्षा ग्रहण करते तथा समाज को शिखर पर पहुँचाने के लिए तत्पर रहते तो कुछ शिक्षा ग्रहण के पश्चात गृहस्थ जीवन जीते हुए सामाजिक बन्धनों का निर्वहन करते थे। दीक्षांत समारोह के समय वह वैदिक ग्रेथों के प्रति आदर सम्मान का भाव प्रकट करता तथा यशस्वी एवं तेजस्वी जीवन के साथ शक्ति, पशु, संपत्ति की प्राप्ति हेतु प्रार्थना करता था।[11] इस प्रकार उसी भाव में वैवाहिक जीवन की समृद्धि और प्रसन्नता के लिए भी प्रार्थना करता था[12] अथर्ववेद मे हमें ब्रह्मचारी जीवन की एक झलक मिलती है, गुरू के लिए वह अग्निहोत्र के लिए वह समिधा इकट्ठी करता एवं गृहस्थों से भिक्षा भी मांग कर लाता था।[13] भिक्षा में जो भी अन्न प्राप्त होता था उसमें से कुछ अग्नि को अर्पण करके ही उसका उपयोग करते थे।[14] राजाओं द्वारा ऋषियों के आश्रम पर आक्रमण करने का उल्लेख मिलता है उस समय विद्यार्थी निर्भीकता से आश्रम की रक्षा करना अपना परमधर्म समझते थे।[15]

वैदिक शिक्षा के द्वारा विद्यार्थी अपने शरीर, मस्तिष्क बुद्धि और व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करके अपने जीवन को उस योग्य बना लेता था कि गृहस्थ के रूप में अपने जीवन को सुचारू दंग से शुरू कर समाज के पूर्ण दायित्वों का निर्वहन कर सके। वह अपने सांस्कृतिक दायित्वों का पूर्ण निष्ठा के द्वारा निर्वहन करता था। इस काल में शिक्षा का प्रबंध राज्य नहीं करता था। गुरू स्वयं अपने घर पर शिक्षा देने का प्रबंध करता गुरू की सम्पति और भिक्षा से प्राप्त घर एवं भोजन सामग्री ही शिक्षा व्यवस्था के लिए उपलब्ध संसाघन थे। कन्याओं को भी शिक्षा दिए जाने का उल्लेख वैदिक साहित्यों में मिलता है, सम्भवतः 600 ई0पू0 के आप–पास महिलाओं अथवा कन्याओं के लिए शिक्षा दिए जाने का उल्लेख है, पर उसके पश्चात सामान्य महिलाओं को शिक्षा पर धीरे–धीरे प्रतिबंध लगा दिया गया होगा। बृहदारण्यक उपनिषद में याज्ञवल्क्य और उनकी पत्नी मैत्रियी[16] तथा गार्गी वाचनवी[17] के बाद–विवाद से स्पष्ट होता है, कि स्त्रियाँ भी उच्चतम बौद्धिक और अध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करती थी। अनेक विद्धान ज्ञान प्राप्ति के लिए देश में घूमते रहते थे, कुरू पंचाल देश में ऐसे एक विद्धान उद्लक आरूणि के बारे में जानकारी मिलती है, ऐसे विद्धान को 'चरक' कहा जाता था। आध्यामिक विषय पर बाद–विवाद करने का उल्लेख मिलता है, पांचाल देश में ऐसी परिषद को पांचाल–परिषद से संबोधित किया जाता था। विदेह राजा जनक भी ऐसी परिषदों का आयोजन करते थे। वैदिक साहित्यों के रक्षा के लिए व्याकरण, निरूक्त, छंद और दर्शन की शिक्षा पर अत्यधिक जोर दिया जाता था। पराविद्या पर अत्यधिक जोर दिया जाता था अन्य विभागों अथवा व्यावसायिक विद्या के संदर्भ में व्यक्ति स्वयं उत्तराधिकारी के रूप में ज्ञान अर्जन करता था।

भारतीय विद्याओं में धर्मेतर विद्या, राजनीति विज्ञान, विधिशास्त्र, आयुर्वेद शल्यशास्त्र, गणित, ज्योतिष व्याकरण, संस्कृत साहित्य, घातु विज्ञान, इत्यादि क्षेत्र में प्रगति हुई। विद्यार्थी गुरू को कोई शुल्क नहीं देता था, प्रत्येक आचार्य के पास दस से पन्द्रह तक विद्यार्थी होते थे। वे विद्या समाप्ति पर गुरू को दक्षिणा के रूप में कुछ धन देते थे।

प्राचीन शिक्षा पद्धति में प्रश्नोत्तर शिक्षा प्रणाली के संबद्ध में बौद्ध एवं जैन साहित्यों, मठों एवं विहारों में भी सामान्य जनों को शिक्षा दिए जाने के प्रमाण मिलते हैं, बौद्ध धर्म के उदय के साथ–साथ प्राचीन हिन्दू शिक्षा

पद्धति में भी परिवर्तन होने के प्रमाण मिलता है। बौद्ध शिक्षा गुरू के आश्रम अथवा गृह में न होती थी वरन् भिक्षुगण मठों और विहारों में शिक्षा तथा शास्त्रों का प्रतिपादन करते थे। संघ में प्रवेश होने के पूर्व प्रत्येक व्यक्ति प्रव्रज्या और उपसम्पदा ग्रहण करता तथा प्रवेश लेने पर किसी एक उपाध्याय (भिक्षु शिक्षक) से शिक्षा प्राप्त करता, मठों में केवल भिक्षु ही पठन–पाठन नहीं करते बल्कि बौद्ध धर्मावलम्बी सेठों तथा सम्पन्न लोगों के पुत्रों को भी शिक्षा दी जाती थी। तिलमुट्ठी जातक में उल्लेख मिलता है कि तक्षशिला, बनारस, राजगृह, मिथिला तथा उज्जयिनी आदि नगरों में बालक शिक्षा प्राप्त करने निमित्त जाते थे।[18] जो बौद्ध शिक्षा केन्द्र के रूप में प्रचलित थे। प्रारम्भ में छात्रों को पाली तथा संस्कृत पढ़ना अनिवार्य होता था, तत् पश्चात् उन्हें विनय, सूत तथा अन्य शास्त्रों का अध्ययन करना पड़ता। चीनी यात्री इत्सिंग ने वर्णन किया है कि बौद्ध शिक्षक रूग्ण विद्यार्थियों की शुश्रूषा करते थे।[19]

बौद्ध संस्थाओं एवं धार्मिक मतानुसार सभी वर्णों को एक जैसी शिक्षा दी जाती थी, हिन्दू धर्मशास्त्रों की तरह पठन–पाठन–क्रम में भेद–भाव जैसी व्यवस्था नहीं दिखाई पड़ती है, इस प्रकार बौद्ध धर्म के द्वारा समाज जन चेतना शिक्षा के माध्यम से जागृत करने का प्रथम प्रयास दिखायी पड़ता है। बौद्ध शिक्षक त्रिपिटक का अध्ययन कराते थे, इसके अतिरिक्त जातकों में अट्ठारह प्रकार के शिल्पों का उल्लेख है, जिनकी शिक्षा का प्रबन्ध तक्षशिला में होने का वर्णन है, इनमें मुख्यतः धनुष–कला[20], आयुर्वेद[21], मंत्र विद्या[22], सर्पविद्या[23], और निधि–कला[24] का उल्लेख है। मज्झिम निकाय में अठारह शिल्पों का उल्लेख मिलता है,[25] जिनमें प्रमुख व्यवहार, गणित, कृषि कला, व्यापार कला, नृत्य, गान तथा चित्रकला आदि शिक्षाओं का विशेष उल्लेख है। इस बौद्ध साहित्य शिक्षा प्रणाली के आलोक में विविध शिक्षा पद्धति का प्रगतिशील आचार–व्यवहार एवं सामाजिक जन चेतना की प्रगति दिखायी पड़ती है।

शैक्षणिक क्रांति का प्रगतिशील पथ आगे भी निरंतर चलता रहा जिसके गुप्त कालीन शासकों को भी दिखायी पड़ती है। गुप्त नरेशों ने धार्मिक अभ्युदय के साथ–साथ शिक्षा के प्रचार–प्रसार के क्रांतिकारी प्रयास किए। इनके शासनकाल में प्राचीन संस्कृत संसार के समस्त देशों से अधिक शिक्षित एवं विकसित था। इस काल में चीन, जापान तथा सुदूर देशों से विद्याभ्यास के निमित्त यात्री भारत आया करते थे।

बौद्ध भिक्षु और आचार्यगण शिक्षण में विशेष अभिरूचि लेते थे, प्रत्येक मठ या संघाराम शिक्षालय का कार्य करता था। चीनी यात्री फाहियान तथा हवेनसांग ने शिक्षण संस्थागारों का वर्णन किया है। गुप्त काल में पाटलीपुत्र विद्या का प्रमुख केन्द्र बन गया था। फाहियान पाटलीपुत्र में तीन वर्ष रहा वह संस्कृत भाषा व संस्कृत ग्रंथों का अभ्यास करता था। कालीदास ने विद्या की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए कहा कि– विद्या के कारण ज्ञान तथा नम्रता[26] आती है। गुरू के सम्पर्क से मूर्ख गुणवान और आलसी उद्योगी हो जाता था।[27] चीनी यात्री इत्सिंग ने लिखा है कि ब्रह्मचारी सोलह वर्ष तक पढ़ता था।[28] आधुनिक काल की तरह सैकड़ों विद्यार्थियों की एक साथ शिक्षा नहीं दी जाती थी, किन्तु अल्प संख्या में शिष्य गुरू के समीप जाकर शिक्षा ग्रहण करते थे। याज्ञवल्क्य ने लिखा है कि ब्रह्मचारी को निकलते हुए सूर्य तथा नग्न स्त्री को नहीं देखना चाहिए।[29] गुप्त काल में शिक्षा प्रायः दो मुख्य भाषाओं में होती थी, शिक्षित समाज के लिए संस्कृत तथा साधारण जनता के लिए प्राकृत भाषा का प्रयोग होता था। गुप्तों से पहले प्राकृत भाषा की प्राधनता थी परन्तु गुप्त शासकों ने संस्कृत भाषा को वरीयता दी। लेख तथा ग्रंथ प्राकृत के बदले संस्कृत भाषा में लिखे जाने लगे, यहाँ तक की बौद्ध साहित्यों में भी संस्कृत भाषा का प्रचलन बढ़ गया। गुप्त काल में समस्त राजकीय कार्य संस्कृत भाषा में होने लगे, मनुष्य संस्कृत तथा प्राकृत के द्वारा समाज में अपने भावों को अभिव्यक्त करता था।[30] गुप्त कालीन लेखों में उपाध्याय तथा चतुर्वेदी[31] नाम मिलता है, जिससे प्रकट होता है कि एक व्यक्ति कई वेदों का पठन–पाठन किया करता था। वेदों के साथ–साथ अन्य विद्याओं का अभ्यास किया जाता था। तुसम के लेख में योगदर्शन आचार्य यशस्नात तथा वसुदत्त के नामों का उल्लेख मिलता है।[32] इस प्रकार इस लेख से यह ज्ञात होता है कि लोग पुराणों, साहित्यों के अतिरिक्त इतिहास का भी अध्ययन करते थे, इस काल में ही वात्स्यायन ने कामसूत्र की रचना की जो कामशास्त्र के लिए अद्वितीय उदाहरण है, आर्यभट्ट, वाराह मिहिर, नागसेन, जैसे विद्वानों ने भी शिक्षा के क्षेत्र में अद्वितीय स्थान स्थापित किया, डॉ0 राय ने लिखा है कि छठी शताब्दी में हिन्दू भस्म वाष्पीकरण तथा उद्घनन की रीति से पूर्ण परिचित थे।[33] इस काल में आयुर्वेदिक शिक्षा का पूर्ण विकास हुआ जिसका प्रभाव भारत के बाहर भी दिखाई पड़ता है।

गुप्तकाल में प्रारंभिक तथा उच्चशिक्षा में विशेष अन्तर दृष्टिगोचर नहीं होता, एक जातक में काशी के सेठ पुत्र का वर्णन मिलता है जो लकड़ी की तख्ती लेकर अक्षर ज्ञान[34] करने जाता था। सारनाथ के मूर्ति–संग्रहालय में गुप्त–कालीन भारतीय वेश में लकड़ी के तख्ती (लिपि–फलक) धारण किए एक बालक की मूर्ति सुरक्षित है।[35] ललित विस्तार नामक ग्रंथ में प्रारंम्भिक पाठशाला के लिए लिपिशाला एवं उसके शिक्षक के लिए 'दारकाचार्य' नाम का उल्लेख मिलता है।[36] मनुस्मृति में उल्लेख मिलता है कि ब्राह्मण बालक आपत्काल के सिवा, अ–ब्राह्मण गुरू से विद्या न ग्रहण करें।[37]

गुप्तकालीन शिक्षा प्रणाली पर प्रकाश डालने पर आभास होता है कि इस काल तक समस्त प्रकार की शिक्षा प्रणाली पर ध्यान दिया गया। इस काल में शिक्षा के प्रति गुप्त कालीन सम्राटों एवं उनके आभात्यों का भी विशेष अनुराग होने का उल्लेख मिलता है, स्वयं समुद्र गुप्त को विद्यानुरागी बताया गया है, गुप्त सम्राट, कुमार गुप्त प्रथम के द्वारा बौद्ध भिक्षुओं को शिक्षा कार्य हेतु गाँव दान में देने का उल्लेख मिलता है, अर्थात गुप्त काल में उच्च कोटि की शिक्षा व्यवस्था का उदाहरण प्राचीन शैक्षणिक का एक प्रमुख प्रस्तुती है।

संदर्भ और टिप्पणी :

1. ऋग्वेद, 10, 717
2. ऋग्वेद, 10, 109, 5
3. वही, 7, 103
4. वही, 10, 71
5. तैतरीय उपनिषद, 1, 11
6. स्वाध्याय प्रवचनाभ्या न प्रमदितव्यम् तैतरीय उपनिषद् 1, 11
7. अथर्ववेद 1.1
8. वही, 1, 9, 3–4, वही 3, 8, 1–6
9. वही, 6, 48
10. वही, 6, 133
11. वही, 5, 16, 7, 33 और 89
12. अथर्ववेद 2.29
13. वही, 11.5, 11.3, 6, 108, 2, 133, 3
14. वही, 6, 71
15. वही, 5, 17, 5; 1, 34, 2–3
16. वृहदारण्यक उपनिषद 2, 4, 4, 5
17. वही, 3, 6, 8
18. तिलमुट्ठ जातक नं0 252, 378, 789
19. टाकाकुसु– इत्सिंग, पृ0 120
20. भीमसेन जातक न. 80
21. महावग्ग 7, 1, 6
22. अनभिरति जा. न. 185
23. मम्पेय जां. नं. 4, 256
24. परन्तप जा. मं. 416
25. भा0 4 पृ0 281, अगुतर निकाय 1, पृ. 85
26. रघु. 10; 71
27. वाटर भा0 1 पृ. 159 बील भा0 1, पृ.78
28. तकाकुसु– इत्सिंग, पृ. 170
29. याज्ञ. 1; 135
30. इ.हि. क्वा. भा. 5, पृ. 308–9
31. फ्लीट–गुप्त लेख नं. 16, 37 व 55

32. का.इ.इ. भा. 3 नं. 63
33. सर, पी.पी. राय– हिस्ट्री ऑफ केमिस्ट्री, भा. 2
34. कटाहक जातक न. 125
35. साहनी– सारनाथ कैटलाग, पृ. 193–94, नं. C(9) 12
36. ललित विस्तार अध्याय, 10;
37. मनु. 22; 242.